पत्रकारों के लिए प्रशिक्षण जरूरी

अभी सितंबर में ही अंग्रेजी समाचारपत्र हिन्दू में बुंदेलखंड़ से भारी संख्या में लोगों के पलायन पर समाचार-लेख प्रकाशित हुआ है। यह आलेख छतरपुर के स्थानीय संवाददाता का न होकर राजधानी भोपाल के पत्रकार का है। इस समस्या पर ऐसा ध्यान आकर्षित करता हुआ कोई आलेख हिन्दी के समाचारपत्रों में और विशेषकर छतरपुर के पत्रकारों का क्यों प्रकाशित नहीं हुआ? झाबुआ के आदिवासियों की कर्ज की स्थिति, वहां उपयोग में आ रहे रासायनिक खाद तथा पशुओं कि स्थिति पर भी इसी समाचारपत्र में जो श्रृंखला प्रकाशित की गई उसका संवाददाता भी भोपाल का था, झाबुआ का नहीं। इससे पहले भी खंडवा जिले के खालवा ब्लॉक तथा अन्य स्थानों पर भूख से बच्चें की मौत तथा कुपोषण की स्थिति पर भोपाल के एक अंग्रेजी समाचारपत्र में समाचार प्रकाशित हुए थे, पर वे भी खंडवा के संवाददाताओं के न होकर एक स्वैच्छिक सेवा संगठन के पत्रकार-कार्यकर्ता के थे। शहडोल में कन्यादान योजना में शामिल युवतियों के कौमार्य परीक्षण का समाचार भी शहडोल के पत्रकार का न होकर राजधानी के पत्रकार ने ही शहडोल जाकर किया। इस तरह के अनेक उदाहरण यह स्थापित करते हैं कि विकास से संबंधित समाचारों में जिला एवं तहसील के संवाददाता उन खबरों को पहचान नहीं पाते या फिर उनकी प्रस्तुति ऐसी नहीं हो पाती की जिस पर पाठकों तथा जिम्मेदार लोगों का ध्यान जा सके, जबकि इन सभी समाचारों की मूल भूमि जिलों में ही मौजूद थी।

कुछ वर्ष पहले जब वरिष्ठ पत्रकार अजीत भट्टाचार्य प्रेस इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया के अध्यक्ष थे, तब उन्होंने अंग्रेजी और बाद में हिन्दी में ग्रासरूट के नाम से एक विकास केंद्रित समाचार मासिक प्रकाशित करना प्रारभं किया था। उसमे प्राय: दिल्ली से प्रकाशित होने वाले समाचार अंग्रेजी समाचारपत्रों से उठाए जाते थे। कभी-कभी हिन्दी के समाचारपत्र भी इनमें स्थान पा तो जाते थे, पर पत्रकार प्राय: राजधानियों के ही हुआ करते थे। अजीत दा से बात की तो उन्होंने दर्द के साथ कहा कि जिलों से समाचार मिलते ही नहीं हैं और पत्रकारों में विकास का समाचार देख पाने की दृष्टि का भी अभाव है। हिन्दी ग्रासरूट के संपादक अन्नू आनंद की भी यही शिकायत इस पत्र के बंद होने तक बनी रही।

लगभग एक दशक पहले पी. साईंनाथ के नेंतृत्व में हिन्दी पत्रकारों के लिए विकास समाचारों को पहचानने और उनके प्रस्तुत करने पर केंद्रित एक प्रशिक्षण कार्यशाला प्रशासन आकादमी भोपाल में आयोजित की गई थी। इसमें इंदौर, रायपुर, जबलपुर, भोपाल के हिन्दी के साथ ही अंग्रेजी के पत्रकारों ने तो हिस्सेदारी की थी, पर जिला एवं तहसीलों का प्रतिनिधित्व बहुत कम ही था। पी. साईंनाथ जिन्हें देश-विदेश में पत्रकार के रूप में ख्याति ही नहीं, वरन् पुरस्कार भी मिल चुका है, यह प्रयास इस कमी को पूरा करने की दिशा में ही था। वे यह मानते और जानते थे कि विकास के समाचारों का भंडार जिलों में है और जिलों में ही उनके प्रकाशन की ज्यादा जरूरत है। हिन्दी प्रदेशों को वे इस दिशा में सक्रिय करना चाहते थे, पर यह प्रयास ज्यादा नहीं चल पाया। अजीत भट्टाचार्य भी प्रेस इंस्टीटयूट की तरफ से ऐसा प्रयास कर चुके थे और उसे ज्यादा करना चाहते थे। इससे बहुत पहले, 70-80 के दशक में राजेंद्र माथुर ने जिले के पत्रकारों में समझ तथा कौशल की जरूरत पर लिखकर, बोलकर और भाग लेकर चाहा था कि जिला पत्रकारिता का विकास वैसे ही हो जैसे क्षेत्रीय पत्रकारिता का हुआ है। पर इस पर बहुत कुछ काम नहीं हो पाया।

इधर पत्रकारिता के स्वरूप में काफी बदलााव आ गया है। ज्यादातर समाचारपत्र 12 से 24 पृष्ठों के हैं। रविवार तथा अन्य दिनों में उनका कलेवर 16 से 40 पृष्ठ तक का भी हो जाता है। अब जिलों तथा मुख्य स्थानों के लिए दो से अधिक पृष्ठ प्रतिदिन होते हैं। ऑफसेट पर मुद्रण अब एक तरह से पुरानी बात हो गई है। नई दूरसंचार टेक्नोलॉजी ने जिला और तहसील ही नहीं गांवों को भी समाचार पत्रों से जोड़ दिया है। अब छोटे से गांव का भी बड़ा या छोटा समाचार मिनटों में दुनिया कि सैर कर सकता है। जिलों में ज्यादातर समाचारपत्रों के दूरसंचार माध्यम युक्त ब्यूरो हैं, जिसमें पहले से अधिक पढ़े-लिखे लोग पत्रकार के रूप में कार्य कर रहे हैं। अब उन्हें पहले से अधिक साधन, सुविधाएं और पारिश्रमिक मिलता है। कुछ लोग वेतन भी पा रहे हैं। अर्थ यह हे कि जिले में पत्रकारिता का परिदृश्य दो दशक पहले की तुलना में काफी बदला हुआ है। दो-तीन दशक पहले बड़े नगरों की तरह का वातावरण अब जिला मुकामों और छोटे शहरों का हो चला है।

संविधान में संशोधन के बाद अधिकतर राज्यों में पंचायत राज की स्थापना हो चुकी है। राज्यों में तीन स्तर पर पंचायतें कार्य कर रही हैं। जिला स्तर की पंचायत का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी भारतीय प्रशासनिक सेवा का व्यक्ति होता है। जनपद या ब्लॉक स्तर की पंचायत के बाद ग्राम स्तर पर पंचायत कार्य कर रही हैं। इन्हें कार्य करते हुए एक दशक से अधिक समय हो गया है। गांव से जिले तक के विकास कार्य में पंचायतों की भागीदारी लगातर बढ़ती जा रही है। यही हाल राजनीतिक गतिविधियों का है। यानी राजनीति या प्रशासन दोनों में ही पंचायत प्रतिनिधि अब सार्थक हस्तक्षेप करता है और उसका यह हस्तक्षेप जिले के विकास की स्थिति को प्रभावित करता है।

बदली परिस्थिति में सत्ता का केंद्र राज्य की राजधानी के साथ ही जिला भी बन चुका है। यह बात अलग है कि जिले में राजनीतिक नेतृत्व या प्रशासनिक योग्यता उस स्तर की नहीं है जो विकास के प्रारंभिक दिनों में जरूरी होती है। यही हाल पत्रकारिता का भी है। जिले की पत्रकारिता में सब कुछ बदल गया है, सिवाय पत्रकारिता की समझ और कौशल के, और यही वजह है कि पलायन, कुपोषण से लेकर राजनीतिक विकास के समाचारों में उस दृष्टि और कौशल का अभाव है जो विकास के लिए आवश्यक है। यह जरूरत केवल विकास समाचारों के लिए ही आवश्यक नहीं है, समाज के समग्र विकास के लिए उस दृष्टि की आवश्यकता है। इस दृष्टि और कौशल के लिए ही अजीत भट्टाचार्य और पी. साईंनाथ, प्रभाष जोशी, राजेंद्र माथुर, हरिवंश या अन्य पत्रकार प्रयास करते रहे हैं। कहीं-कहीं राज्यों के जनसंपर्क विभाग ने भी इस तरह की कोशिशों को प्रोत्साहित भी किया है। यह भी सच है कि आज से दो या तीन दशक पुरानी पत्रकारिता की स्थितिओं में फर्क तो पड़ा है। समाचार लिखने के कौशल में अब जिले के पत्रकार पहले से अधिक कुशल हैं, पर समाचार की समझ अब भी देखा-देखी की लकीर पर ही चलती हैं। अनुज खरे दैनिक भास्कर में हैं और पहले भास्कर अकादमी तथा बाद में भास्कर के जिला संस्करणों के प्रभारी के रूप में कार्य करते रहे हैं। क्रांति चतुर्वेदी नवभारत, इंदौर के संपादक हैं और इससे पूर्व जिला संस्करणों के प्रभारी रहे हैं। विकास पत्रकार के रूप में उनका एक सुपरिचित नाम है। उन्हें इस तरह के विषय पर लिखने के लिए गोयनका पुरस्कार भी मिला है। हरिमोहन शर्मा अब एक नये समाचारपत्र पीपुल्स समाचार के स्थानीय संपादक ग्वालियर में हैं। पहले वे इस तरह के दायित्व पर

भोपाल, हिसार और जयपुर में रहे। भोपाल और जयपुर में वे संस्करणों के प्रभारी थे, जिसमें जिला संवाददाताओं का कार्य ही मुख्य है।

ओमप्रकाश सिंह पीपुल्स समाचार के संपादक रहे हैं। वे पहले जागरण में विकास के समाचारों को प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते रहे हैं। एनके सिंह ने पहले भास्कर अब हिन्दुस्तान टाइम्स में इसी धारा को प्रोत्साहित किया है। ये कुछ वे नाम हैं जिन्हें दिल्ली या महानगरीय पत्रकारिता से बाहर जिला पत्रकारिता के विशेष कार्य करने के लिए जाना जाता है। नामों की यह सूची पूरी नहीं है। पर इन सभी का मानना यही है कि जिलों में विकास तथा विकास के लिए खबरों का भंडार नगरों से ज्यादा है, पर समझ और कौशल के अभाव में बाजी नगरीय पत्रकारों के हाथ में होती है। सचिन जैन विकास संवाद और एक्शन एड में ग्रामीण पत्रकारों के लिए प्रशिक्षण आयोजित करते रहते हैं। वे यह तो मानते हैं साथ ही कहते हैं कि शहरी पत्रकारों में भी वे ही सफल हो पाते हैं, जिसमें समझ और कौशल संश्लिष्ठ रूप में मौजूद है। साथ ही जो ऐसे समाचारों के लिए दौड़-भाग से परहेज नहीं करते हैं।

इस विवेचन का अर्थ है कि समाज के समग्र विकास के समाचारों का भडार जिले में भी उतना ही है जितना महानगरों में है। दोहन के अर्थ में जिले अधिक संभावनाओं से भरे हैं। पर समाचार की अवधारणात्मक समझ तथा प्रस्तुति का कौशल जिले के पत्रकारों में नहीं है। समाज के विकास के लिए उनको प्रशिक्षण देकर दक्ष बनाना समय की जरूरत है। अभी इस कार्य को परिणाममूलक दृष्टि से न तो वे समाचारपत्र कर रहे हैं जिनके वे संवाददाता हैं, न उनके हितों के लिए कार्य कर रहे संगठन और न ही पत्रकारिता का शिक्षण देने वाले संस्थान। गाहे-बगाहे इस तरह के उन्मुखीकरण एवं प्रशिक्षण का कार्य उपयुक्त सभी संस्थान एवं व्यक्ति कर रहे हैं।

अंत में कहे गए निष्कर्ष में विरोधाभास है। उनका आशय समझे बिना यह लोगों और संस्थान पर आरोप लगाना माना जाएगा। संभवत: माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय एकमात्र ऐसा पत्रकारिता शिक्षण संस्थान है, जिसने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की इस अवधारणा को सार्थक किया, कि विश्वविद्यालय अपने ज्ञान को विश्वविद्यालय की दीवारों तक ही सीमित न रखें। वे समाज के उन लोगों तक जाएं, जिन्हें उसकी जरूरत है और उन्हें ज्ञान के अनुप्रयोग से शिक्षित-प्रशिक्षित करें। अपने प्रारंभिक वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों के कार्यरत पत्रकारों तथा जिज्ञासुओं के लिए 60 दिवस, 30 दिवस, 15-10 या 7 दिवस के प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तथा कार्यशालाएं म.प्र., राजस्थान तथा छतीसगढ़ में की गईं। तब उन्हें अचरज से देखा गया था। प्रेस इंस्टीट्यूट सहित प्राय: सभी संस्थाओं में ऐसे प्रशिक्षण एक दिन के रखे जाते रहे हैं। अजीत दा ने तो मुझसे पूछा भी क्या इतने समय तक लोग रुकते और रुचि लेते हैं। यही बात भास्कर के प्रबंधकों ने जाननी चाही थी। तब मैंने उनसे भी कहा कि परिणाममूलक कौशल के लिए एक दिन या एक घंटे तक प्रशिक्षण जानकारी या अवबोधन तो दे सकता है, लेकिन कौशल तथा अवधारणा का अनुप्रयोग नहीं उतार सकता है।

यह संदर्भ यहां इसलिए भी दिया गया है ताकि पत्रकारिता जैसे अनुप्रयोगी विषय के लिए प्रशिक्षण के हुए कार्य का मूल्यांकन करते हुए यह समझा जा सके कि इतने लंबे समय में इतने सारे लोग देशभर में विकास के मुद्धों को समझाते रहे, फिर भी इस समय विकास के समाचारों या आलेखों के लिए बहुत सीमित लोग ही सामने आते हैं और वे भी प्राय:

शहरों के ही होते हैं, जिलों के नहीं। पत्रकारिता जानकारी मूलक ज्ञान तो है, पर उसकी सफलता उस ज्ञान के सृज-नात्मक अनुप्रयोग में निहित है जिसका अभाव पत्रकारिता प्रशिक्षण में सतत बना हुआ है। और शायद इन्हीं वजहों से प्रभाष जी जैसे लोग यह आरोपित कर देते हैं कि पत्रकारिता, कविता, साहित्य या चित्रकला जैसा नैसर्गिक ज्ञान संभावना का हिस्सा है, प्रशिक्षण का नहीं।

अब यह बात धीरे ही सही, पर गलत साबित होती जा रही है और समग्र विकास के लिए सतत् प्रशिक्षण समय की जरूरत बनता जा रहा है। इसकी महता ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अधिक है, और बेहद जरूरी है।

****